कहानी

वाढेकर रामेश्वर महादेव

लड़का ही क्यों?

गाँव में सामाजिक परिवर्तन किस तरह से किया जा सकता है,इस संदर्भ में उच्च शिक्षित लड़कों में चर्चा हो रही थी, उसी समय जोर से आवाज आई–" जीत बेटा जल्द घर आना, काम है तुमसे" माँ ने कहा।

जीत घर दौड़ते– दौड़ते आया, ओर कहने लगा–"बताइए माँ क्या काम है?"

"जीत, पढ़ाई कब तक करनी है?" माँ ने पूछा।

"माँ मुझे बहुत पढ़ना है, सिर्फ़ नौकरी के लिए नहीं, समाज परिवर्तन के लिए" जीत ने कहा।

"बेटा, पढ़ाई बहुत हुई है तेरी, अब तू डाक्टर बना है साहित्य का" माँ ने कहा।

हाँ, सही है माँ, लेकिन मुझे ओर पढ़ना है, लिखना है। स्त्री समस्या समाज के सामने लानी हैं और समाज सेवा भी !

"तुझे जो करना है वह कर, उसके पहले विवाह कर" माँ ने कहा।

इतना जल्द विवाह, संभव नहीं माँ, मुझे समय चाहिए।

बेटा जीत, मेरी अब उम्र हुई है और हम देहात में रहते है, जल्द विवाह नहीं किया तो समाज ताने मारेगा।

"मुझे कौन लड़की देगा माँ ? मेरे पास क्या है? न नौकरी न घर" जीत ने गंभीर स्वर में कहा।

"तेरे पास शिक्षा है, मेहनत करने की क्षमता भी ओर क्या चाहिए तुम्हें ?" माँ ने कहा।

ठीक है माँ, मैं विवाह करने के लिए तयार हूँ किन्तु मुझे पढ़ी,लिखी लड़की चाहिए।

"पढ़ी, लिखी लड़की है मेरे नज़र में" माँ ने आनंदित होकर कहा।

"कौन– माँ?" जीत ने उत्साहपूर्ण भाव से पूछा।

'आशा'। नाम की तरह ज़िंदगी में आशावादी है ओर निरंतर रहेगी । वह गरीब परिवार से है किन्तु संस्कारी । वह मेरी बहू बनने के लिए पात्र है। उसकी शिक्षा स्नातकोत्तर तक हुई है। दोन्हों के विचार भी मिलेंगे। लड़की को देखने के लिए जल्दी जा, जीत।

देखने की जरूरत नहीं है माँ। आप को पसंद हैं,तो मुझे भी। विवाह का मुहूर्त निकाल दीजिए।

विवाह का मुहूर्त निकला। जीत और आशा का विवाह धूमधाम से हुआ । ज़िंदगी की नई शुरुआत हुई । एक दूसरे से प्रेम बढ़ता गया। सुख, दुःख के साथ विवाह को तीन साल पुरे हुए।

एक दिन जीत ने कहा–"आशा विवाह होकर तीन साल हुए,अब मुझे लड़का चाहिए।"

"जल्द ही खुशख़बरी दूंगी तुम्हें। लेकिन आप को लड़का ही क्यों चाहिए?"आशा ने पूछा।

"घरानों का नाम चलाने के लिए" जीत ने कहा।

"घरानों नाम, सिर्फ़ लड़का चलता है, यह धारणा सरासर गलत है, लड़की तो दो घरानों का नाम चलाती है, ससुराल और मायके का" आशा ने कहा।

"मतलब, मैं नहीं समझा" जीत ने कहा।

तो सुनो जीत,"किसी लड़की का विवाह होता है, वह कालांतर से नौकरी के लगती है, तो वह पहले मायके का सरनेम लगाती है और बाद में ससुराल का।"

"तब भी मुझे सिर्फ़ लड़का चाहिए, मुझे ही नहीं तो मेरे माँ को भी लड़का ही चाहिए" चिल्ला कर जीत ने कहा।

आख़िर क्यों जीत? बुढ़ापे की चिंता सताती है क्या तुम्हें? वर्तमान में ज़्यादातर लड़कियां ही मां, बाप का सहारा बन रही हैं, उनकी देखभाल कर रही हैं। बहुत से लड़के माँ, बाप को अनाथ कर रहे हैं ओर बाद में आश्रम में डाल रहे हैं, यह वास्तव परिस्थिति तुम्हें स्वीकारनी होगी।

"आप पढ़े,लिखे होकर भी ऐसी बातें कर रहे हो जीत, यह शोभा नहीं देता । आप तो समाज सेवा करते हैं ओर विचार ऐसे...!"

"मुझे प्रेगनेंट रहकर चार माह हुए जीत लेकिन मैंने आप को बताया नहीं" आशा ने शांत आवाज में कहा।

"अच्छा, कोई बात नहीं। हम कल चेकअप

कर लेते है ,समझ आएगा लड़का है या लड़की" जीत ने कहा।

"चेकअप तो बंद है" आशा ने कहा।

"पैसों से सब कुछ होता है, प्राइवेट अस्पताल में। चल, काम हो जाएगा" जीत ने कहा।

अस्पताल में चेकअप हुआ, आशा को रूम से बाहर निकाल दिया और जीत को सब बातें बताई गई। अस्पताल के बाहर जीत आने के बाद आशा ने पूछा–"क्या हुआ जीत? डाक्टर साहब ने क्या कहा?"

जीत ने कहा–"जो नहीं होना था वही हुआ।"

मतलब, जीत।

"लड़की है" जीत ने दुःख भरे स्वर में कहा।

यह किसी के हाथ में नहीं है जीत। लड़की को हम अच्छी तरह पढ़ाएंगे।

"नहीं! नहीं!! गर्भ गिराना होगा" जीत ने तिरस्कार भाव से कहा।

मैं नहीं गिराऊंगी जीत। लड़का या लड़की होना तो पुरुष पर निर्भर रहता है, इसमें स्त्री का क्या दोष ? तब भी स्त्री को दोषी ठहराया जाता है।

"तुझे घर छोड़ना पड़ेगा, आशा" जीत ने कहा।

मैं कुछ भी करूंगी किन्तु लड़की को जन्म देकर रहूंगी जीत । वह अपने गांव के तरफ़ गई। वहां, परिवार वाले स्वीकार ने के लिए तैयार नहीं थे। सब स्वार्थी बन गए थे। सब अपने कार्य में व्यस्त थे। मां,बाप का लड़कों के सामने कुछ नहीं चला। आशा दिन भर गांव में घूमती रही । उसी समय सुमन की नज़र आशा पर पढ़ी ओर उसने कहा– "कब आई आशा?"

"आज ही आई हूँ" आशा ने कहा।

"तुम्हारे घर क्यों नहीं गई?" सुमन ने पूछा।

"मेरा कोई घर नहीं रहा, न ससुराल का न मायके का । मैं बेघर हूँ बेघर...! भाई कहते है कि तुम्हारा विवाह हुआ, तुम्हारे अधिकार खत्म हुए यहां के। ओर पति कहता है, मेरे घर में मत रहना। मैं करू तो क्या करू?"निराश भाव से आशा ने कहा।

डरना मत आशा, मैं तुम्हारे साथ हूँ। मेरे घर चल, वह घर तेरा समझ ओर मुझे माँ।

"मैं आती हूँ लेकिन शर्त पर" आशा ने कहा।

"कौन–सी शर्त?" सुमन ने पूछा।

मैं आप के घर के पास रहूंगी, आप के घर में नहीं। मैं तुम पर बोझ नहीं बनना चाहती।

"जो तुझे सही लगे वह कर" सुमन ने कहा।

आशा मेहनत करती रही, ख़ुद के पैरों पर खड़ी हुई। देखते–देखते समय बीत गया और नौ माह पुरे हुए। एक दिन रात को आशा को बहुत तकलीफ़ होने लगी । आवाज सुनकर सुमन उसके पास गई ओर पूछने लगी– "क्या हुआ आशा?"

आशा ने कहा–"मुझे बहुत तकलीफ़ हो रही

है, मुझे अस्पताल लेकर चल, प्राइवेट नहीं सरकारी अस्पताल।"

सुमन ने कहा–" सरकारी अस्पताल में डाक्टर साहब ध्यान नहीं देते। मेरे पास पैसे है, प्राइवेट अस्पताल चलेंगे।"

"नहीं, सरकारी अस्पताल में ही " आशा ने जोर से कहा।

रात के बारह बजे अस्पताल जाने में। वहाँ कोई नहीं था। नर्स थी, वह भी अच्छी तरह बात नहीं कर रही थी। डाक्टर साहब को फोन लगाने के बजाय जोर, जोर से कहने लगी– " तुझे यही समय मिला क्या आने के लिए? नींद ख़राब की। ख़ुद भी सुकुन से नहीं जीती और दूसरे को भी नहीं जीने देती।"

यह सुनकर सुमन को बहुत गुस्सा आया। उसने बहुत गालियां दी,तब भर्ती कर लिया।

सुमन कहने लगी –"आशा,लोग इस तरह बर्ताव क्यों करते है?"

आशा ने कहा–" जाने दो सुमन, छोटी, छोटी घटनाएं होती रहती है। किन्तु डाक्टर साहब कब आ जाएंगे, मुझे दर्द हो रहा है।"

सुमन ने कहा–"धीरज रख, जल्द आ जाएंगे।"

"मुझे शौचालय के लिए जाना है, मुझे लेकर चल भला" आशा ने कहा।

"यहाँ तो शौचालय नहीं है,कहाँ जाएंगे रात के समय?" सुमन ने कहा।

अस्पताल के बाहर चल सुमन, शौचालय तो जाना ही पड़ेगा । सरकारी अस्पताल है, इतना तो कष्ट झेलना होगा । यहाँ पैसे भी कम लगते है...

सुमन ने कहा–"आशा, क्या सरकार उन्हें पैसा नहीं देती, बहुत फंड देती है किन्तु सब मिलबाटकर खाते हैं। सुविधा कुछ नहीं करते। इस कारणवश यह दिन देखने को मिल रहे है। डाक्टर साहब सरकार का पगार लेते है और ख़ुद के प्राइवेट अस्पताल में रहते हैं। उन्हें सरकारी अस्पताल में आने के लिए समय नहीं।

सुमन बस हुआ भाषण, चल जल्दी अस्पताल के अंदर। शौचालय से आने के बाद थोड़ी देर के लिए अच्छा लगा, बाद में दर्द ओर बढ़ा। दर्द सहते, सहते सुबह हुई, तब भी डाक्टर साहब नहीं आए थे। कुछ समय बाद नर्स की आवाज सुनाई दी, डाक्टर साहब सुबह आठ बजे तक आ जाएंगे।

डाक्टर साहब को आते हुए देखकर सुमन ने कहा–"आशा अंदर चल, मैं नर्स को बुलाती हूँ।नर्स को बहुत आवाज दी, वह आने के लिए तैयार नहीं क्योंकि उन्हें पैसों की लालसा थी।"

नर्स ने धीरे आवाज में कहा–"मुझे पाँच सौ रुपये चाहिए, तभी मैं आशा को अंदर लेकर जाऊंगी।"

सुमन कहने लगी–"क्या समय आया है, किसी को किसी व्यक्ति की कीमत नहीं है। सब पैसों के पीछे पड़े हैं , यह कहकर पाँच सौ रूपये दिए।"

आशा को अंदर लेकर जाने के बाद बहुत तेज़ी से तकलीफ़ शुरू हुई ,ख़ुन कम होने के वजह से। दो–तीन घंटों बाद अंदर से आवाज आई–" लड़की हुई है लड़की, बाहर कोई रिश्तेदार हो तो अंदर आइए। वहाँ ख़ुन के रिश्तेदार कोई नहीं थे, सुमन दौड़ते, दौड़ते गई ओर आशा को वार्ड में लेकर आई।"

आशा को होश आया ओर वह कहने लगी–"मेरी बेटी कैसी है?सब ठीक ठाक है न....

"हाँ,सब ठीक ठाक है" सुमन ने कहा।

आशा ने कहा–"पति, सास, भाई, माँ,बाप आदि में से कोई मिलने आया है क्या?"

सुमन ने कहा–"मैं हूँ न, तुझे किसी की ज़रूरत नहीं।"

हाँ,वह तो मुझे समझ आया सुमन, तु ही मेरे लिए सब कुछ है। अब मैं मेरी बेटी को

लेकर दूर चली जाऊंगी, दूसरे गाँव,शहर में। बेटी ही मेरा सब कुछ है। मैं कभी हार नहीं मानूंगी,जान भी नहीं दूंगी। उसे बहुत पढ़ाऊंगी और स्वावलंबी बनाऊंगी। ओर उसे अन्याय के विरुद्ध लढ़ने के लिए सक्षम बनाऊंगी।

हिंदी विभाग । डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय औरंगाबाद– महाराष्ट्र– 431004,

चलभाष: 9022561824, इमेल: rvadhekar@gmail.com